कश्मीर : एक सांस्कृतिक विरासत

-मधु रानी

संस्कृति के अन्तर्गत किसी भी देश या समाज में परम्परा से चले आ रहे आचार-विचार, रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन, जीवन पद्धति, संस्कार, नैतिकता, ज्ञान, कला, संगीत, वास्तुविज्ञान, शिल्पकला, दर्शन, कानून तथा समाज में सदस्य के रूप में मनुष्य द्वारा अर्जित अन्य क्षमताएं सम्मिलित होती हैं। संस्कृति हमारे मनोरंजन एवं आनन्द प्राप्त करने के साधनों में, धार्मिक कार्यों में और साहित्य में भी दृष्टिगोचर होती है। भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति के दो प्रकार हैं। जो विषय हमारी सभ्यता और भौतिक पक्षों जैसे हमारी वेशभूषा, खान-पान, रहन-सहन से संबंद्ध होते हैं वह भौतिक संस्कृति के अन्तर्गत आते हैं। हमारे विचार, विश्वास, भावनाएँ, आदर्श का संबध अभौतिक संस्कृति से है। डॉ. देवराज के अनुसार, "सभ्यता का आन्तरिक प्रभाव संस्कृति है। सभ्यता समाज की बाह्य व्यवस्था का नाम है। संस्कृति व्यक्ति के अन्तर के विकास का नाम है।"[1]

सभ्यता के आदिकाल से अपने नैसर्गिक प्राकृतिक सौन्दर्य, सुरम्य, भौगोलिक स्थिति, झील-झरनों, सुन्दर शालीन लोगों एवं सांस्कृतिक विरासत के लिए कश्मीर देश-विदेश में प्रसिद्ध है और हमेशा चर्चा का विषय रहा है। यह क्षेत्र इतिहास, संस्कृति, सभ्यता, कला, भाषा, साहित्य और दर्शन की दृष्टि से समृद्ध रहा है। शताब्दियों से कश्मीर कवियों, साहित्यकारों तथा कलाकारों के आकर्षण का केन्द्र रहा है। विभिन्न धर्मों के परस्पर मेल के परिणामस्वरूप यहाँ मानवता और धर्मनिरपेक्ष संस्कृति का विकास हुआ। कश्मीर की सांझी संस्कृति के विषय में बीसवीं सदी के महान कश्मीरी कवि गुलाम अहमद मजहूर का कहना है, "सिंधु नदी में स्नान कर मानसबल झील में ध्यान कर हरमुख पर्वत पर ईश्वर का दर्शन कीजिए। आप सभी कश्मीरी एक ही धरती के हैं। संस्कार कभी एक-दूसरे को अलग नहीं करता। मुसलमान दूध है तो हिन्दू चीनी हैं। दूध और चीनी को मिलाकर स्वाद लीजिए। हिन्दू नाव नियंत्रण करें और मुसलमान पतवार चलाएं। इस तरह हमारी नाव आनंदपूर्वक तैरे।"[2]

कश्मीर भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी भाग में स्थित केन्द्र शासित प्रदेश जम्मू-कश्मीर का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह उत्तर भारत में हिमालय पर्वत श्रृंखला के

सबसे ऊँचे हिस्से में विद्यमान है। अनिर्वचनीय शब्दातीत, मुग्ध करने वाले अप्रतिम प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण कश्मीर को 'भारत का स्विट्जरलैंड', 'धरती पर स्वर्ग' और 'पीर वैर अर्थात् आध्यात्मिक गुरूओं की भूमि' कहा जाता है।

जम्मू-कश्मीर पहले एक राज्य था और इसके तीन संभाग थे। जम्मू, कश्मीर और लद्दाख। इसकी सीमा 6 देशों से लगती थी और यह राज्य सामरिक और सुरक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। किन्तु 5 अगस्त 2019 को भारतीय संसद ने जम्मू-कश्मीर और लद्दाख को दो अलग-अलग केन्द्र शासित प्रदेश घोषित कर दिया। इसके साथ ही जम्मू-कश्मीर को विशेष दर्जा देने वाले भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 और 35ए को भी समाप्त कर दिया।

वर्तमान में जम्मू-कश्मीर में मुख्यता दो संभाग हैं- जम्मू और कश्मीर। दोनों क्षेत्र भौगोलिक पृष्ठभूमि, रीति-रिवाज, संस्कृति, वातावरण, धर्म, वेशभूषा, खान-पान एवं भाषाओं की दृष्टि से भिन्नता रखते हैं। ग्रीष्म ऋतु में जब जम्मू में अत्यंत गर्मी होती है, वहीं तब कश्मीर का तापमान ठण्डा रहता है। सर्दी के मौसम में तो कश्मीर के अधिकतर जिले बर्फ की चादर से आच्छादित रहते हैं। दोनों संभागों की भाषाएं भी भिन्न-भिन्न हैं। कश्मीर में मुख्यता कश्मीरी और जम्मू में डोगरी भाषा बोली जाती है। साहित्यिक दृष्टि से भी दोनों क्षेत्र समृद्ध हैं। जम्मू-कश्मीर सांझी संस्कृति और राष्ट्रीय एकता का विशिष्ट उदाहरण है। उर्मिलेश कहते हैं, "कभी यहां संस्कृत और प्राकृत के रचनाकारों ने अपने सृजन-कर्म से समाज को प्रभावित किया तो कभी यहां सूफियों-संतों की वाणी ने लोगों का मार्गदर्शन किया। बौद्ध-दर्शन और चिंतन की एक समृद्ध परम्परा ने भी कश्मीरी समाज और इसकी मनीषा को नया परिप्रेक्ष्य दिया।"[3]

कश्मीर की संस्कृति से तात्पर्य यहां की परम्पराओं, सभ्यता एवं संस्कृति से है। कश्मीर की बहुआयामी संस्कृति मध्य एशियाई के साथ-साथ दक्षिण एशियाई संस्कृति से प्रभावित है। यह क्षेत्र अपनी सांस्कृतिक विरासत और प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। यह हिन्दू, मुस्लिम, सिख एवं बौद्ध दर्शन के मिश्रण से एक संपूर्ण संस्कृति का रूप लेती है जो सहिष्णुता और मानवतावाद के मूल्यों पर आधारित है। इस संस्कृति के सम्मिलित रूप को कश्मीरियत कहा जाता है। अशोक कुमार पाण्डेय लिखते हैं, "इतने लम्बे इतिहास में साथ रहते और आक्रान्ताओं का अत्याचार बर्दाश्त करते दोनों कौमों में एक

विशिष्ट तरीके की सहजीविता विकसित की थी जिसे कश्मीरी राष्ट्रवाद के उभार के दौर में अक्सर कश्मीरियत कहा गया, एक ऐसी स्थिति जहाँ कश्मीरी अस्मिता प्रमुख हो जाती है और धार्मिक अस्मिता गौण।"[4]

कश्मीर में निवास करने वाले लोगों का विशेष प्रकार का पहनावा, कश्मीरी खान-पान, उनकी भाषा, सांस्कृतिक विरासत, नृत्य एवं संगीत, पश्मीना शॉल की बुनाई (भौगोलिक संकेतक प्रमाणित) विशेष किस्म की कालीन बनाने की कला एवं सूफियाना कश्मीरी पहचान कश्मीर की संस्कृति के महत्वपूर्ण तत्व हैं।

समाज और साहित्य का अन्योन्याश्रित संबंध होता है। समाज के नवनिर्माण में साहित्य की पारदर्शिता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। साहित्य में समाज का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। साहित्यकार सामाजिक प्राणी होने के कारण सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर साहित्य सृजन करता है।

प्राचीनकाल से कश्मीर की धरती संस्कृत भाषा एवं संस्कृत साहित्य की प्रमुख केन्द्र रही है। मूलत: संस्कृत के अधिकतर प्रसिद्ध विद्वान इसी भूमि की उपज हैं। परम्परागत रूप से कश्मीर का साहित्य संस्कृत में था और इस पर शैव दर्शन का विशेष प्रभाव रहा है। कश्मीर संतों, संस्कृत विद्वानों, आचार्यों, साहित्यकारों, नुंद ऋषि और प्रसिद्ध कश्मीरी कवयित्री ललेश्वरी की उद्भव भूमि है, जिनके प्रेरणास्वरूप यहां साहित्य सृजन की उर्वर पृष्ठभूमि की स्थापना हुई। विष्णु शर्मा, चरक, कालिदास, नागसेन, भामह, आनन्दवर्धन, वसुगुप्त, सोमानंद, रुद्रट, मम्मट, क्षेमेन्द्र, अभिनवगुप्त, कल्हण जैसे महान विद्वानों का संबंध इसी क्षेत्र से है।

ललद्यद को कश्मीरी भाषा की प्रथम कवयित्री माना जाता है। वह निराकार शिव की उपासक थी। "ललेश्वरी शैव योगिनी कवयित्री थी, जिसने अपनी व्यक्तिगत अनभूतियों तथा सामूहिक जीवन के बारे में प्रभाव तथा प्रतिक्रियाएं, भाषा के रचनात्मक प्रयोग द्वारा प्रकट की और कश्मीरी भाषा की रचनात्मकता को एक नया आयाम दिया।"[5] इसके अतिरिक्त शेख नूरूद्दीन (नुंद ऋषि), खवाज़ा हबीब, हब्बा खातून एवं कृष्ण राजदान आदि कश्मीर के प्रमुख संत कवि हैं। कश्मीरी प्रेम गीतों की जननी हब्बा खातून को माना जाता है।

चौदहवीं शताब्दी में कश्मीर में इस्लाम धर्म का आगमन हुआ जिसका यहाँ के साहित्य, भाषा और समाज पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। इसके परिणामस्वरूप कश्मीर में संस्कृत एवं कश्मीरी भाषा के साथ-साथ फारसी भाषा भी प्रचलन में आ गई।

यह क्षेत्र खूबसूरत और अद्भुत हस्तशिल्प कला के लिए भी जाना जाता है। पश्मीना शॉल अपने कपड़े, डिजाइन, कढ़ाई और गुणवत्ता के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। यह शॉल राजसीपन का प्रतीक है इसलिए इसे बहुत पसंद किया जाता है। इसके अतिरिक्त कागज की लुगदी, टोकरी बनाना, लकड़ी की नक्काशी, अखरोट की लकड़ी से बनाया गया फर्नीचर एवं चाँदी के बर्तन आदि कश्मीरी हस्तशिल्प के उदाहरण हैं। कश्मीर सदैव पर्यटकों एवं सैलानियों के लिए आकर्षण का केन्द्र रहा है जिसके कारण सरकार द्वारा हस्तशिल्प उद्योग का विस्तार किया जाता रहा है।

घाटी में लोगों की आय और जीविका का प्रमुख स्त्रोत पर्यटन, कृषि एवं फल उत्पादन है। लगभग 80 प्रतिशत ग्रामीण आबादी कृषि और उससे जुड़े व्यवसायों पर निर्भर है। प्रदेश की कुल आय में 37 प्रतिशत भागीदारी कृषि क्षेत्र की है। चावल, सरसों, मक्का, ज्वार, बाजरा, अलसी, कपास, गेहूँ और जौ यहां की प्रमुख फसलें हैं। फलों में सेब, बादाम, अखरोट, नाशपाती और खुबानी की पैदावार होती है। कुछ क्षेत्रों में केसर की खेती व्यापक स्तर पर होती है, जिसका प्रमुख केन्द्र पंपोर है। 2020 में कश्मीर के केसर को भौगोलिक संकेतक दिया गया (GI Tag)। शॉल, कालीन, हस्तशिल्प एवं कृषि निर्यात के कारण प्रदेश को विदेशी मुद्रा की प्राप्ति अच्छी मात्रा में होती है।

कश्मीर के अधिकतर लोग पारम्परिक वेशभूषा में रहते हैं। यहां की जलवायु परिस्थितियों एवं समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को दर्शाती है इस क्षेत्र की पारम्परिक पोशाक फिरन। ज्यादातर लोग मौसम के अनुसार ढीली-ढाली पोशाकें पहनते हैं। पुरुष सिर पर टोपी पहनते हैं और महिलाएं सम्मान के तौर पर सिर और कंधे ढक के रखती हैं। कश्मीरी वेशभूषा वास्तव में उनकी जीवनशैली और संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है। इससे यह ज्ञात होता है कि अभी भी भारत अपने सांस्कृतिक मूल्यों का पालन कर रहा है। यह वेशभूषा न केवल यहां की कलात्मक उत्कृष्टता को दर्शाती है अपितु पीढ़ियों से चली आ रही स्थायी सांस्कृतिक विरासत का भी प्रमाण देती है।

धर्म, जातीयता और भाषा की विविधता के बावजूद यहां हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध और सिक्खों का सामंजस्यपूर्ण मिश्रण है जिसने सदियों से इस क्षेत्र की सांझी संस्कृति को परिभाषित किया है। उर्मिलेश के शब्दों में, "झीलों, झरनों और नदियों की अप्रतिम घाटी की तरह ही कश्मीरी लोग भी बेहद काव्यात्मक सुंदर, सभ्य-शालीन और सहिष्णु रहे हैं। सदियों से यहां कई धर्मों के मतावलंबी एक साथ रहते हैं।"[6]

कश्मीरियों का प्रमुख खाद्य पदार्थ चावल और मांस है। ब्राह्मण होने के बावजूद कश्मीरी हिन्दू भी मांसाहारी और शाकाहारी दोनों प्रकार के भोजन का प्रयोग करते हैं। कहवा, शीर चाय या नून चाय पेय पदार्थों में प्रमुख हैं। हेराथ (शिवरात्री), लोहड़ी, बैशाखी, ईद-उल-फितर, नवरोज़, ट्यूलिप त्यौहार, हेमिस त्यौहार, सिंधु दर्शन एवं डोमाचे कश्मीर के लोकप्रिय त्यौहार हैं। हस्तशिल्प की दुकानें, बहु-व्यंजन, चित्रकला में भागीदारी और पारम्परिक नृत्य इन त्यौहारों का अभिन्न अंग हैं। इन त्यौहारों के माध्यम से लोग कश्मीरी संस्कृति को उजागर करते हैं। कश्मीरी परम्पराओं में इस क्षेत्र का भौगोलिक वैभव और इतिहास दृष्टिगोचर होता है।

कश्यप ऋषि, शंकराचार्य, ललद्यद, नुंद ऋषि जैसे संतों की भूमि, धरती पर स्वर्ग कहे जाने वाले कश्मीर की परम्पराओं, मूल्यों एवं हिन्दू-मुस्लिम की सांझी संस्कृति को आतंकवाद नामक ग्रहण ने झकझोर कर रख दिया जिसका प्रभाव संस्कृति, साहित्य और यहां के अस्तित्व पर पड़ना स्वाभाविक था। अपनी सुरम्य भौगोलिक स्थिति एवं प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण चर्चा में रहने वाला कश्मीर 1990 के बाद आतंकवाद और हिंसा-प्रतिहिंसा के लिए सुर्खियों में रहने लगा। 1990 में फैले आतंकवाद के कारण असंख्य कश्मीरी पंडितों को घाटी से निर्वासित होकर विस्थापन का दर्द झेलना पड़ा। कश्मीरी पंड़ितों के विस्थापन के साथ ही अनेक मुसलमानों को भी इस त्रासदी को भोगना पड़ा। "कश्मीर में आतंकवादियों के कारण न केवल हिन्दुओं की बल्कि मुसलमानों की भी दुर्दशा हुई।"[7]

सन् 1990 के दशक में देश में आर्थिक संकट से निपटने के लिए भारत सरकार ने नई आर्थिक नीति के तहत नए आर्थिक सुधारों की घोषणा की जिसमें उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण का आरम्भ हुआ। किन्तु दूसरी तरफ सन् नब्बे का दशक जम्मू-कश्मीर के इतिहास का काला अध्याय माना जाता है, कारण है आतंकवाद और उसके परिणामस्वरूप विस्थापन की त्रासदी। राजनीतिक अराजकता और अव्यवस्था के कारण इस

दशक के आरम्भ में अनेक नरसंहार, हत्याकांड, बलात्कार हुए, विकृत परिस्थितियों के कारण आतंकवाद का उदय हुआ और घाटी के मूल निवासी कहे जाने वाले कश्मीरी पंड़ितों को अपनी जन्मभूमि व जड़ों से पलायन करने के लिए विवश होना पड़ा।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कश्मीर की संस्कृति बहुआयामी है जिसका प्रत्येक तत्व यहां की समृद्ध विरासत का प्रतिनिधित्व करता है। पारम्परिक वेशभूषा, संगीत, कला, भाषा, साहित्य, लजीज व्यंजन, जीवंत परम्पराएं एवं त्यौहार आदि मिलकर कश्मीर के सांस्कृतिक ताने-बाने को विश्व भर में प्रसिद्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कश्मीरी (कोशूर) भाषा यहां के लोगों की सांस्कृतिक पहचान का अभिन्न हिस्सा है क्योंकि यह भाषा केवल कश्मीरी मुसलमानों और कश्मीरी पंड़ितों द्वारा (कश्मीर में) बोली जाती है। अत: संस्कृति निरन्तर परिवर्तनशील होती है और यह लगातार चलती रहने वाली एक मानसिक यात्रा है।

सन्दर्भ

1. डॉ. देवराज, भारतीय संस्कृति, पृ. 20
2. सं. प्रो. कृपाशंकर चौबे, भारतीय साहित्य में कश्मीर, पृ. 12
3. उर्मिलेश, कश्मीर : विरासत और सियासत, पृ. 18
4. अशोक कुमार पाण्डेय, कश्मीरनामा, पृ. 184
5. रतनलाल शांत, कश्मीर : साहित्यिक संदर्भ, पृ. 7
6. उर्मिलेश, कश्मीर : विरासत और सियासत, पृ. 12
7. सं. प्रो. कृपाशंकर चौबे, भारतीय साहित्य में कश्मीर, पृ. 12

मधु रानी

शोधार्थी (पीएच.डी.)

हिन्दी विभाग,

जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू - 180006

मो. 6006084105

ई. मेल : madhurani751@gmail.com